The Chitransh Academic & Research
An International Journal of Multidisciplinary Research
An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume1 | Issue 1 | January 2025
ISSN: 3049-303X (Online)
Website: www.thechitranshacadmic.in

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप

लीलावती पटेल

ग्राम - दर्राभाठा, एनटीपीसी सीपत, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

लेख विवरण

शोधपत्र

प्राप्ति तिथि: 14/01/2025
स्वीकृति तिथि: 20/01/2025
प्रकाशनतिथि: 30/01/2025

मुख्य शब्द: राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक चेतना, स्वाधीनता, जन-जागरण, दिनकर, भारतीय संस्कृति, राष्ट्रप्रेम।

सारांश

राष्ट्रीय चेतना के सशक्त और प्रभावशाली कवियों में रामधारी सिंह दिनकर का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। दिनकर जी ऐसे कवि हैं, जिन्होंने साहित्य के माध्यम से ऐसी रचनाओं का सृजन किया, जो भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय चेतना, आत्मगौरव, संघर्ष और मानवीय संवेदनाओं को जागृत करने के साथ-साथ सांस्कृतिक चेतना के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। दिनकर के काव्य-भाव में राष्ट्रीयता के साथ-साथ सामाजिक-आर्थिक असमानता, अकर्मण्यता, भोगवाद और ब्राह्मणवाद का प्रबल विरोध दिखाई देता है। उनके काव्य में साहित्यिक सौंदर्य और विचारों का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। उनकी रचनाएँ जीवन की अनुभूतियों का सजीव चित्रण प्रस्तुत करती हैं। जिस समय भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, उस समय दिनकर की वाणी ने जनता को अन्याय और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा प्रदान की। उनकी प्रमुख कृतियाँ *रश्मिरथी, रेणुका, कुरुक्षेत्र* और *हुंकार* में राष्ट्रीय चेतना का प्रखर स्वर विद्यमान है।

प्रस्तावना

राष्ट्रीय भावनाओं के ओजस्वी कवि रामधारी सिंह दिनकर जी अपने युग के महान् कवियों में गिने जाते हैं। उन्होंने गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं में रचनाएँ की हैं और समाज को सशक्त बनाने का कार्य किया है। साहित्य के आलोचकों द्वारा उन्हें राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक काव्य धारा के कवि के रूप में चिन्हित किया गया है। जब कोई राष्ट्र राजनीतिक दासता, सामाजिक विषमता अथवा सांस्कृतिक संकट का सामना करता है, तब साहित्यकार की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। वह केवल घटनाओं का वर्णन नहीं करता, बल्कि समाज को सही दिशा देने का कार्य भी करता है। वे लिखते हैं-

"भारत को आधुनिक भी बनना है और उसे अपनी परंपरा के श्रेष्ठ अंश को भी बचाकर रखना है।"

इस प्रकार वे देश की प्रगति के पक्ष में थे और मूल्यों के समर्थन में भी। दिनकर ने अपने काव्य द्वारा भारतीय जनता को देशप्रेम और त्याग का संदेश दिया। उनकी कविताएँ केवल साहित्यिक उपलब्धियाँ नहीं हैं, बल्कि वे राष्ट्रीय आंदोलन की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति भी हैं।

दिनकर की साहित्य रचना उस काल की है, जब भारतीय समाज राजनीतिक पराधीनता, आर्थिक शोषण और सामाजिक असमानताओं से जूझ रहा था। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध स्वतंत्रता आंदोलन अपने निर्णायक चरण में था। देश के युवाओं में अंग्रेजों के प्रति संघर्ष की भावना थी, किंतु उन्हें एक ऐसी वाणी की आवश्यकता थी, जो उनके उत्साह को दिशा प्रदान कर सके-

"रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ,
जाने दे उनको स्वर्ग धीर,
पर लौटा हमें गांडीव-गदा,
लौटा दे अर्जुन-भीम वीर।"

ये पंक्तियाँ आज भी युवामन को प्रेरित करती हैं। दिनकर की कविताएँ इसी आवश्यकता की पूर्ति करती हैं। उनकी लेखनी में ओज, उत्साह, संघर्ष और आत्मविश्वास का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। दिनकर ने अपने काव्य में राष्ट्र को सर्वोपरि मानते हुए भारतीय संस्कृति के गौरव का गान किया।

राष्ट्र शब्द का सामान्य अर्थ किसी निश्चित भू-भाग में निवास करने वाले उन लोगों के समूह से है, जो समान ऐतिहासिक अनुभवों, सांस्कृतिक परंपराओं, सामाजिक मूल्यों तथा सामूहिक आकांक्षाओं से जुड़े होते हैं। राष्ट्र केवल भूमि का टुकड़ा नहीं होता, बल्कि वह लोगों की भावनाओं, विश्वासों और सांस्कृतिक स्मृतियों का समन्वित रूप होता है। राष्ट्रीय चेतना राष्ट्र के प्रति आत्मीयता, निष्ठा और उत्तरदायित्व की भावना को व्यक्त करती है।

भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप अत्यंत व्यापक रहा है। भारत विविध भाषाओं, धर्मों, संस्कृतियों और परंपराओं वाला देश है। यहाँ राष्ट्रीयता का आधार केवल राजनीतिक एकता नहीं, बल्कि सांस्कृतिक समन्वय और साझा ऐतिहासिक अनुभव भी है। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय चेतना का विकास भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के साथ गहराई से जुड़ा हुआ था। इस काल में साहित्यकारों ने जनता में राष्ट्रप्रेम और स्वाधीनता की भावना जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। हिंदी साहित्य में भारतेंदु हरिश्चंद्र, मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान और रामधारी सिंह दिनकर जैसे साहित्यकारों ने राष्ट्रीय चेतना को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की।

रामधारी सिंह दिनकर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

आधुनिक हिंदी साहित्य में रामधारी सिंह दिनकर का व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावशाली रहा है। वे केवल एक कवि नहीं थे, बल्कि चिंतक, निबंधकार, सांस्कृतिक विचारक तथा राष्ट्र चेतना के समर्थ प्रवक्ता भी थे। हिंदी साहित्य में उन्हें "राष्ट्रकवि" के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। उनकी भाषा शुद्ध संस्कृतनिष्ठ हिंदी थी, परंतु भाषा प्रयोग के आधार पर वह सरल और सहज भी थी।

रामधारी सिंह दिनकर का जन्म 23 सितंबर 1908 को बिहार के बेगूसराय जिले के सिमरिया गाँव में हुआ था। उनका बचपन आर्थिक अभावों और संघर्षों के बीच बीता। इन कठिन

परिस्थितियों के बावजूद उनका व्यक्तित्व दृढ़ और आत्मविश्वास से भरा रहा। ग्रामीण परिवेश में पले-बढ़े होने के कारण वे भारतीय जन-जीवन को निकट से देखते और अनुभव करते थे। यही अनुभव आगे चलकर उनके साहित्य का आधार बना।

दिनकर ने इतिहास, राजनीति, दर्शन और संस्कृति का गहन अध्ययन किया था। भारतीय परंपरा के साथ-साथ वे विश्व साहित्य और आधुनिक चिंतन से भी परिचित थे। इस व्यापक अध्ययन ने उनके दृष्टिकोण को समृद्ध बनाया। परिणामस्वरूप उनका साहित्य केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसमें वैचारिक गहराई और सामाजिक प्रतिबद्धता भी दिखाई देती है।

दिनकर की प्रमुख कृतियों में ***रेणुका, हुंकार, रसवंती, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा, नीलकुसुम, नीम के पत्ते, धूप और धुआँ, बापू, इतिहास के आँसू, हारे को हरिनाम, चक्रव्यूह*** आदि काव्य ग्रंथ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त ***संस्कृति के चार अध्याय*** जैसी गद्य कृति भारतीय सांस्कृतिक चिंतन का महत्वपूर्ण दस्तावेज मानी जाती है।

वे निराशा और पलायन के कवि नहीं हैं, बल्कि कर्म, संघर्ष और परिवर्तन के कवि हैं। उनका विश्वास था कि कोई भी राष्ट्र तभी प्रगति कर सकता है, जब उसके नागरिक अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक हों और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने का साहस रखें। इसी कारण दिनकर का व्यक्तित्व राष्ट्रीय चेतना के प्रतीक के रूप में स्थापित हुआ। उनकी लेखनी ने स्वतंत्रता आंदोलन के समय जनता को प्रेरित किया और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र निर्माण की दिशा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना की पृष्ठभूमि

किसी भी साहित्यकार की रचनात्मक चेतना उसके युगीन परिवेश से प्रभावित होती है। दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विकास को समझने के लिए उस समय की सामाजिक,

राजनीतिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को समझना आवश्यक है। जब दिनकर जी साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय हुए, उस समय भारत अंग्रेजी शासन के अधीन था।

निधि भार्गव का कथन इस पर तर्कसंगत बैठता है कि-

"दिनकर जी जन-जागरण चाहते थे, इसी कारण से विद्रोही व क्रांतिकारी कवि बने। वे स्वभाव से भावुक व कल्पनाशील थे, परंतु वातावरण तथा संस्कार ने राष्ट्रीयता का स्वरूप ले लिया।"

भारत को सुसुप्त अवस्था से निकालकर सुबह की गौरवमयी धारा से जोड़ने का कार्य दिनकर ने ही किया। देश में राजनीतिक दमन, आर्थिक शोषण और सामाजिक असमानता व्याप्त थी। भारतीय जनता स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्ष कर रही थी। महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन जैसे राष्ट्रीय आंदोलनों ने पूरे देश में नई चेतना का संचार किया।

रामवृक्ष बेनीपुरी जी का स्पष्ट मत था कि-

"हमारे क्रांति युग का संपूर्ण प्रतिनिधित्व इस समय दिनकर ही कर रहे हैं।"

क्रांतिकारी विचारधारा को जिन-जिन उथल-पुथल से गुजरना होता है, दिनकर जी की कविताओं में उसकी सच्ची तस्वीर दिखाई देती है। उनके लिए इतिहास केवल अतीत की स्मृति नहीं था, बल्कि वर्तमान और भविष्य के निर्माण का आधार था। उन्होंने महाभारत, रामायण और भारतीय इतिहास के अनेक पात्रों को अपने काव्य का विषय बनाया। किंतु उनका उद्देश्य केवल कथाओं का पुनर्पाठ करना नहीं था, बल्कि उन पौराणिक पात्रों के माध्यम से अपने युग की समस्याओं को हल करने का प्रयास करना था।

उदाहरण के लिए, ***रश्मिरथी*** में कर्ण के माध्यम से उन्होंने जाति की व्यर्थता, सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा का संदेश दिया, जबकि ***कुरुक्षेत्र*** में युद्ध और शांति के प्रश्नों पर गंभीर विचार प्रस्तुत किए।

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना पर ग्रामीण भारत की परिस्थितियों का भी प्रभाव था। उन्होंने किसानों, श्रमिकों और सामान्य जन-जीवन की समस्याओं को निकट से देखा था। इसलिए उनके साहित्य में राष्ट्र केवल अभिजात वर्ग का नहीं, बल्कि जनसाधारण का राष्ट्र है।

डॉ. श्रीनिवास शर्मा के शब्दों में-

"सच्चे अर्थों में भारतीय युवावर्ग के निराश हृदय में देशभक्ति की उमंग लहराने वाले एकमात्र कवि उन दिनों रामधारी सिंह दिनकर ही थे। अनुभूति की तीव्रता, भावों की गतिशीलता और क्रांति की पुकार दिनकर की कविता में निरंतर गूँजती रही।"

दिनकर का काव्य संसार कालजयी है। उनकी रचनाएँ पाठकों को झकझोरती हैं और युवाओं के लिए प्रेरणास्रोत के रूप में कार्य करती हैं। उनकी राष्ट्रीय दृष्टि संकीर्ण या आक्रामक नहीं है। वे राष्ट्रप्रेम को मानवता के विरोध में नहीं देखते, बल्कि उनके लिए सच्ची राष्ट्रीयता वही है, जो मानव कल्याण और विश्वबंधुत्व का मार्ग प्रशस्त करे।

यही कारण है कि उनके काव्य में राष्ट्रीय चेतना और मानवतावाद का सुंदर समन्वय दिखाई देता है।

दिनकर के काव्य में स्वाधीनता चेतना

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना का पहला स्वरूप स्वाधीनता की भावना है। पराधीन भारत की पीड़ा को उन्होंने गहराई से अनुभव किया और जनता को स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा दी। उनकी कविताओं में दासता के प्रति तीव्र आक्रोश और स्वतंत्रता के प्रति अटूट आस्था दिखाई देती है।

वे लिखते हैं-

"समर शेष है, उस स्वराज को सत्य बनाना होगा,
जिसका है ये न्यास उसे सत्वर पहुँचाना होगा।
धारा के मग में अनेक जो पर्वत खड़े हुए हैं,

गंगा का पथ रोक इंद्र के गज जो अड़े हुए हैं।
कह दो उनसे झुके अगर तो जग में यश पाएँगे,
अड़े रहे अगर तो ऐरावत पत्तों से बह जाएँगे।"
— *समर शेष है*

दिनकर ने पराधीनता को मनुष्य और राष्ट्र दोनों के लिए अपमानजनक स्थिति माना है। उनकी कविताओं में स्वतंत्रता के प्रति तीव्र आकांक्षा तथा दासता के प्रति विद्रोह का स्वर स्पष्ट रूप से सुनाई देता है। प्रस्तुत पंक्तियाँ राष्ट्रीय आंदोलन की भावना से प्रभावित हैं-

"मखमल के पर्दों के बाहर,
फूलों के उस पार,
ज्यों का त्यों है खड़ा,
आज भी मरघट-सा संसार।"

दिनकर की कविताओं में स्वतंत्रता केवल राजनीतिक मुक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्वतंत्रता का भी प्रतीक है। वे चाहते थे कि भारत केवल विदेशी शासन से मुक्त न हो, बल्कि शोषण, अन्याय और असमानता से भी स्वतंत्र हो।

दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना का दूसरा महत्वपूर्ण आधार सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। वे मानते हैं कि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसकी संस्कृति में निहित होती है। यदि कोई समाज अपनी सांस्कृतिक जड़ों से कट जाता है, तो उसकी राष्ट्रीय पहचान कमजोर पड़ जाती है।

दिनकर ने भारतीय सांस्कृतिक परंपरा को केवल भौगोलिक सीमाओं तक सीमित नहीं माना, बल्कि भारत की महान सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और आध्यात्मिक विरासत का गौरवपूर्ण चित्रण किया है।

वे लिखते हैं-

"प्रिय दर्शन इतिहास कंठ में, आज ध्वनित हो काव्य बने, वर्तमान की चित्रपटी पर, भूतकाल संभाव्य बने।"

दिनकर नव-जागरण हेतु संस्कृति के महान् पात्रों का आह्वान करते हैं-

"जागो! गौतम! जागो! महान,
जागो! अतीत के क्रांति-गान!
जागो! जगती के धर्म-तत्व,
जागो! हे बोधिसत्व!"
— *हुंकार*

उन्होंने भारतीय संस्कृति को केवल धार्मिक या आध्यात्मिक रूप तक सीमित नहीं किया, बल्कि उसे मानवता, सहिष्णुता, समन्वय और नैतिक मूल्यों की संस्कृति के रूप में प्रस्तुत किया।

डॉ. नगेंद्र के अनुसार-

"छायावादोत्तर काल में राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा को सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाने का श्रेय दिनकर को ही जाता है। उनकी राष्ट्रीय चेतना में भारतीयता का मर्म और समसामयिक विद्रोह दोनों शामिल थे।"

उनकी प्रसिद्ध गद्य कृति ***संस्कृति के चार अध्याय*** भारतीय संस्कृति के इतिहास की व्यापक व्याख्या प्रस्तुत करती है। दिनकर ने भारतीय संस्कृति की रक्षा को राष्ट्रीय कर्तव्य माना है, किंतु वे अंधानुकरण के समर्थक नहीं थे। वे परंपरा को विवेकपूर्ण दृष्टि से स्वीकार करने और उसे आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित करने की बात करते हैं।

वे लिखते हैं-

"वैराग्य छोड़ बाहों की विभा संभालो,
चट्टानों की छाती से दूध निकालो।

योगियों नहीं, विजयी के सदृश जियो रे!"

— ***परशुराम की प्रतीक्षा***

इस प्रकार उनके साहित्य में संस्कृति, परंपरा और आधुनिकता का सुंदर समन्वय दिखाई देता है।

दिनकर के काव्य में सामाजिक न्याय और समानता की भावना

दिनकर जी का काव्य केवल राष्ट्रीय चेतना तक सीमित नहीं था, बल्कि उनका संबंध समाज में समानता और न्याय की स्थापना से भी था। उनकी कविताओं में किसान, श्रमिक और वंचित वर्ग के प्रति गहरी सहानुभूति दिखाई देती है। उनके काव्य में जातिगत, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक विषमताओं तथा अन्याय का विरोध स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

वे लिखते हैं-

"दो न्याय अगर तो आधा दो,
और उसमें भी यदि बाधा हो,
तो दे दो केवल पाँच ग्राम,
रखो अपनी धरती तमाम।"

दिनकर का मानना था कि किसी भी राष्ट्र की प्रगति के लिए समाज में व्याप्त शोषण और अत्याचार को दूर करना आवश्यक है। उनकी प्रसिद्ध कृति ***रश्मिरथी*** सामाजिक न्याय की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

रश्मिरथी में कर्ण के चरित्र के माध्यम से दिनकर ने जन्म आधारित भेदभाव का विरोध किया और कर्म, योग्यता तथा मानवीय गरिमा को महत्व दिया। उनके अनुसार राष्ट्र की वास्तविक उन्नति तभी संभव है, जब समाज के प्रत्येक वर्ग को समान अधिकार और सम्मान प्राप्त हो।

इस प्रकार दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना सामाजिक न्याय, समानता और मानव गरिमा के साथ जुड़ी हुई दिखाई देती है।

दिनकर के काव्य में जन-जागरण और क्रांतिकारी चेतना

दिनकर समाजवादी विचारधारा के पक्षधर थे। उनकी कविताएँ जनता को निष्क्रियता और निराशा से बाहर निकालने का कार्य करती हैं। उनकी प्रसिद्ध कृति ***हुंकार*** इसी क्रांतिकारी चेतना का सशक्त उदाहरण है। इस कृति में कवि ने जनता को अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने और संघर्ष करने की प्रेरणा दी है।

दिनकर क्रांतिकारी राष्ट्रीय चेतना के समर्थक थे। उनकी क्रांतिकारी चेतना केवल व्यवस्था की आलोचना तक सीमित नहीं थी, बल्कि वे एक बेहतर, न्यायपूर्ण और समानतामूलक समाज की कल्पना भी प्रस्तुत करते हैं। यही कारण है कि उनका साहित्य आज भी प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है।

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप इस प्रकार दिखाई देता है-

"सूखी रोटी खाएगा जब कृषक खेत में धरकर हल,
तब दूँगी मैं तृप्ति उसे बनकर लोटे का गंगाजल।
उसके तन का दिव्य स्वेद कण बनकर गिरती जाऊँगी,
और खेत में उन्हीं कणों से मैं मोती उपजाऊँगी।"
— *विश्व छवि, रेणुका*

इसी प्रकार सामाजिक अन्याय और शोषण के विरुद्ध वे लिखते हैं-

"दलित हुए निर्बल सबलों में मिटे राष्ट्र, उजड़े दरिद्र जन,
आ! सभ्यता आज कर रही असहायों का शोणित शोषण।
क्रांति-धात्री कविते! जग उठ, आडंबर में आग लगा दे,

पतन, पाप, पाखंड जलें, जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे।"

— *कस्मै देवाय, रेणुका*

क्रांतिकारी चेतना का अर्थ केवल हिंसात्मक विद्रोह नहीं है। दिनकर अन्याय, शोषण और असमानता के विरुद्ध वैचारिक एवं नैतिक संघर्ष को भी क्रांति का स्वरूप मानते हैं। उनके लिए क्रांति का उद्देश्य समाज में न्याय और समानता की स्थापना करना है।

दिनकर की प्रमुख कृतियों में राष्ट्रीय चेतना

'हुंकार' (1938) में राष्ट्रीय चेतना

दिनकर की ***हुंकार*** क्रांतिकारी और देशभक्ति कविताओं का संग्रह है। यह उस समय लिखी गई, जब भारतीय जनता स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्षरत थी। देश में राजनीतिक असंतोष और स्वतंत्रता की आकांक्षा तीव्र रूप से बढ़ रही थी। ऐसे समय में ***हुंकार*** ने जनमानस में नई ऊर्जा और आत्मविश्वास का संचार किया।

इस कृति में कवि ने अन्याय, शोषण और दासता के विरुद्ध विद्रोह का स्वर बुलंद किया है। वे लिखते हैं-

"मेरी पायल झनकार रही तलवारों की झनकारों में,
अपनी आगमनी बजा रही मैं आप क्रुद्ध हुंकारों में।"

कवि जनता को यह संदेश देते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए साहस, त्याग और संघर्ष आवश्यक हैं। ***हुंकार*** में व्यक्त क्रांतिकारी चेतना युवाओं को विशेष रूप से प्रेरित करती है।

हुंकार के साथ-साथ ***वैतालिक***, ***रसवंती***, ***इतिहास के आँसू***, ***धूप और धुआँ***, ***सामधेनी*** आदि काव्य संग्रहों में भी कवि के विद्रोही स्वर और क्रांतिकारी चेतना का प्रभाव दिखाई देता है। इन रचनाओं में कवि ने जनता के हृदय में आत्मसम्मान, संघर्ष और राष्ट्रप्रेम की भावना को जागृत किया।

यह कृति राष्ट्रीय आंदोलन की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति बनकर सामने आती है। इसमें राष्ट्र के प्रति समर्पण, आत्मसम्मान और जनशक्ति के प्रति गहरा विश्वास दिखाई देता है।

'कुरुक्षेत्र' (1946) में राष्ट्रीय चेतना

कुरुक्षेत्र दिनकर की एक महत्वपूर्ण चिंतनपरक कृति है। यह महाभारत की पृष्ठभूमि पर आधारित होते हुए भी आधुनिक युग की समस्याओं से गहराई से जुड़ी हुई है। इस रचना में कवि युद्ध और शांति, न्याय और अन्याय, मानवता और सत्ता जैसे महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करता है। राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में ***कुरुक्षेत्र*** का विशेष महत्व है, क्योंकि इसमें राष्ट्र के नैतिक आधारों और मानवीय मूल्यों की चर्चा की गई है।

दिनकर युद्ध की विभीषिका और उसके विनाशकारी परिणामों को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-

"युद्ध को पहचानते सब लोग हैं,
जानते हैं युद्ध का परिणाम अंतिम ध्वंस है!
सत्य ही तो, कोटि का वध पाँच के सुख के लिए।"

दिनकर यह स्पष्ट करते हैं कि केवल शक्ति के आधार पर कोई राष्ट्र महान नहीं बन सकता। राष्ट्र की वास्तविक महानता न्याय, मानवता और नैतिक मूल्यों में निहित होती है। कवि अन्यायपूर्ण व्यवस्था के विरोध को आवश्यक मानते हैं।

वे लिखते हैं-

"शांति नहीं तब तक,
जब तक सुख भाग न नर का सम हो,
नहीं किसी को अधिक हो,
नहीं किसी को कम हो।"

दिनकर के अनुसार यदि शांति अन्याय को बनाए रखने का माध्यम बन जाए, तो उसके विरुद्ध संघर्ष करना उचित है। वे अत्याचार सहने को भी एक प्रकार की कमजोरी मानते हैं-

"अत्याचार सहन करने का,
कुफल यही होता है,
पौरुष का आतंक मनुज,
कोमल होकर खोता है।"

इस प्रकार ***कुरुक्षेत्र*** में राष्ट्रीय चेतना नैतिक उत्तरदायित्व, सामाजिक न्याय और मानव कल्याण के साथ जुड़कर सामने आती है। इसमें कवि ने राष्ट्र की उन्नति के लिए न्याय, समानता और शांति को आवश्यक माना है।

'आशा का दीपक' में राष्ट्रीय चेतना

दिनकर अपनी रचनाओं के माध्यम से देश के लोगों को जागृत करते हैं और उन्हें लक्ष्य प्राप्ति तक संघर्ष करते रहने की प्रेरणा देते हैं। ***आशा का दीपक*** में कवि निराशा से बाहर निकलकर कर्म और विश्वास के मार्ग पर चलने का संदेश देते हैं।

वे लिखते हैं-

"दिशा दीप्त हो उठी, प्राप्त कर पुण्य-प्रकाश तुम्हारा,
लिखा जा चुका अनल-अक्षरों में इतिहास तुम्हारा।
जिस मिट्टी ने लहू पिया, वह फूल खिलाएगी ही,
अंबर पर घन बन छाएगा ही उच्छ्वास तुम्हारा।
और अधिक ले जाँच, देवता इतना क्रूर नहीं है।
थककर बैठ गए क्या भाई! मंजिल दूर नहीं है।"

इन पंक्तियों में कवि ने संघर्ष, आशा और आत्मविश्वास की भावना को व्यक्त किया है। वे जनता को विश्वास दिलाते हैं कि त्याग और परिश्रम से राष्ट्र का उज्ज्वल भविष्य निर्मित किया जा सकता है।

'रेणुका' (1935) में राष्ट्रीय चेतना

रेणुका दिनकर की महत्वपूर्ण कृतियों में से एक है। दिनकर जी प्रगतिवादी एवं स्वच्छंदतावादी कवियों में से थे। वे रूढ़ियों, विषमता, शोषण एवं अराजकता के विरुद्ध आवाज उठाते थे। उनकी कविताओं में सामाजिक जागरण और राष्ट्रीय चेतना का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

वे देश-द्रोह और निष्क्रियता के विरुद्ध चेतावनी देते हुए लिखते हैं-

"अब समझा चुप्पी कायरता की वाणी है,
बहुत अधिक चातुर्य आपदाओं का घर है।
दोषी केवल वही नहीं जो नयनहीन था,
उसका भी है पाप आँख थी किंतु जो
बड़ी-बड़ी घड़ियों में मौन तटस्थ रहा है।"
— *रेणुका*

इन पंक्तियों में कवि ने अन्याय के समय मौन रहने वालों की आलोचना की है। उनके अनुसार राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह अन्याय के विरुद्ध अपनी आवाज उठाए।

दिनकर उपेक्षित वर्ग की पीड़ा को जनमानस तक पहुँचाकर उन्हें राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य करते हैं। वे लिखते हैं-

"दो आदेश फूँक दूँगी, उठे प्रभाती राग महान,
तीनों काल ध्वनित हो स्वर में जागे सुप्त भुवन के प्राण।
गत विभूति भावी की आशा ले युगधर्म पुकार उठे,

सिंहों की घन अंध गुहा में जागृति की हुंकार उठे।"

— *रेणुका*

इस प्रकार ***कुरुक्षेत्र***, ***आशा का दीपक*** और ***रेणुका*** जैसी कृतियों में दिनकर की राष्ट्रीय चेतना का व्यापक स्वरूप दिखाई देता है। उनके काव्य में स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, मानवता, संघर्ष और राष्ट्र निर्माण की भावना का सुंदर समन्वय मिलता है।

'रश्मिरथी' (1952) में राष्ट्रीय चेतना

दिनकर की सर्वाधिक लोकप्रिय कृतियों में ***रश्मिरथी*** का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह महाभारत के महान योद्धा कर्ण के जीवन पर आधारित एक प्रसिद्ध काव्य रचना है। यद्यपि इसका मुख्य विषय कर्ण का व्यक्तित्व है, फिर भी इसमें राष्ट्रीय चेतना के अनेक आयाम दिखाई देते हैं। कर्ण सामाजिक न्याय, आत्मसम्मान और संघर्ष का प्रतीक है। वह विपरीत परिस्थितियों में भी अपने साहस और प्रतिभा के बल पर आगे बढ़ता है।

दिनकर ने कर्ण के माध्यम से यह संदेश दिया है कि मनुष्य का मूल्य जन्म से नहीं, बल्कि उसके कर्म और चरित्र से निर्धारित होना चाहिए। वे लिखते हैं-

"ऊँच-नीच का भेद न माने,
वही श्रेष्ठ ज्ञानी है।
दया-धर्म जिसमें हो,
सबसे वही पूज्य प्राणी है।
तेजस्वी सम्मान खोजते नहीं गोत्र बतलाकर,
पाते हैं जग से प्रशस्ति अपना कर्तव्य दिखलाकर।"

इन पंक्तियों में सामाजिक समानता और मानवीय गरिमा का संदेश मिलता है। दिनकर जन्म आधारित भेदभाव का विरोध करते हुए कर्म और योग्यता को महत्व देते हैं।

संघर्ष और आत्मविश्वास की चेतना

राष्ट्रीय चेतना की दृष्टि से ***रश्मिरथी*** की प्रमुख विशेषता संघर्ष और आत्मविश्वास की भावना है। कर्ण के माध्यम से कवि ने मनुष्य को कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य बनाए रखने और संघर्ष करने की प्रेरणा दी है।

वे लिखते हैं-

"सच है, विपत्ति जब आती है,
कायर को ही दहलाती है।
शूरमा नहीं विचलित होते,
क्षण एक नहीं धीरज खोते।
विघ्नों को गले लगाते हैं,
काँटों में राह बनाते हैं।"

इन पंक्तियों में कवि सच्चे वीरों के गुणों का वर्णन करते हैं। वे बताते हैं कि वीर व्यक्ति संकटों से भागते नहीं, बल्कि उनका सामना करते हुए अपनी राह स्वयं बनाते हैं।

वे आगे कहते हैं-

"है कौन विघ्न ऐसा जग में,
टिक सके वीर नर के मग में।
खम ठोंक ठेलता है जब नर,
पर्वत के जाते पाँव उखड़।
मानव जब जोर लगाता है,
पत्थर पानी बन जाता है।"

इन पंक्तियों में मनुष्य की शक्ति, साहस और दृढ़ संकल्प को व्यक्त किया गया है। दिनकर के अनुसार निरंतर प्रयास और आत्मविश्वास से असंभव कार्य भी संभव हो सकते हैं।

मानवता और राष्ट्र निर्माण की भावना

दिनकर के अनुसार एक सशक्त राष्ट्र वही होता है, जहाँ सभी नागरिकों को समान अवसर प्राप्त हों। वे रामायण, महाभारत और इतिहास की घटनाओं का वर्णन करते हैं, किंतु उनका उद्देश्य केवल अतीत का चित्रण करना नहीं, बल्कि आधुनिक राष्ट्रीयता की भावना को प्रस्तुत करना है।

वे सत्ता और जनता के संबंध को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-

"दो राह! समय के रथ का,
पहिए का घरघर नाद सुनो।
सिंहासन खाली करो कि
जनता आती है।"

इन पंक्तियों में लोकतांत्रिक चेतना और जनशक्ति की भावना व्यक्त होती है। दिनकर जनता को राष्ट्र की वास्तविक शक्ति मानते हैं।

सामाजिक न्याय और समानता की चेतना

रश्मिरथी मानवीय गरिमा का समर्थन करने वाली कृति है। यह राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने का कार्य करती है। कर्ण का संघर्ष केवल व्यक्तिगत संघर्ष नहीं रह जाता, बल्कि वह उन सभी लोगों के संघर्ष का प्रतीक बन जाता है, जो समाज में उपेक्षा और अन्याय का सामना करते हैं।

कर्ण की पीड़ा को व्यक्त करते हुए दिनकर लिखते हैं-

"हाय! कर्ण तू क्यों जन्मा था?
जन्मा तो क्यों वीर हुआ?
कवच-कुंडल भूषित भी तेरा
अधम शरीर हुआ।
धँस जाए वह देश अतल में
गुण की जहाँ नहीं पहचान,

जाति-गोत्र के बल से ही
आदर पाते हैं जहाँ सुजान।"

इन पंक्तियों में कवि ने जातिगत भेदभाव और सामाजिक अन्याय का विरोध किया है। वे ऐसे समाज की कल्पना करते हैं, जहाँ व्यक्ति का सम्मान उसके गुण, कर्म और योग्यता के आधार पर हो।

कर्ण के माध्यम से दिनकर यह संदेश देते हैं कि वीरता, मानवता और कर्तव्य ही मनुष्य की वास्तविक पहचान हैं। वे लिखते हैं-

"वीर वही है जो कि शत्रु पर जब भी खड्ग उठाता है,
मानवता के महागुणों की सत्ता भूल नहीं जाता है।"

"धनराशि जोड़ना लक्ष्य नहीं,
साम्राज्य भोगना लक्ष्य नहीं।"

इस प्रकार ***रश्मिरथी*** राष्ट्रीय चेतना को सामाजिक न्याय, समानता, मानवता और संघर्ष की भावना से जोड़ती है। यह कृति मनुष्य को आत्मविश्वास, परिश्रम और नैतिक मूल्यों के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है।

'परशुराम की प्रतीक्षा' (1962) में राष्ट्रीय चेतना

परशुराम की प्रतीक्षा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लिखी गई दिनकर की एक महत्वपूर्ण कृति है। इस रचना में 'परशुराम' एक प्रतीक के रूप में उपस्थित हैं। वे अन्याय, भ्रष्टाचार और सामाजिक पतन के विरुद्ध संघर्ष की शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। कवि ऐसे नेतृत्व और सामाजिक चेतना की अपेक्षा करते हैं, जो राष्ट्र को नैतिक पतन से बचा सके।

इस कविता की रचना 1962 के भारत-चीन युद्ध के समय हुई थी। इस समय देश को वीरता, साहस और आत्मविश्वास की आवश्यकता थी। दिनकर ने अपनी इस रचना के माध्यम से देशवासियों और सैनिकों में राष्ट्रप्रेम तथा पौरुष की भावना जागृत करने का प्रयास किया।

दिनकर स्पष्ट करते हैं कि स्वतंत्रता केवल अधिकार नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व भी है। राष्ट्र की उन्नति के लिए प्रत्येक नागरिक को सक्रिय भूमिका निभानी होगी, अन्यथा वही राष्ट्र के लिए संकट का कारण बन सकता है। वे लिखते हैं-

"यह पाप उन्हीं का हमको मार गया है,
भारत अपने घर में ही हार गया है।"

कवि देशवासियों को जागृत करते हुए कहते हैं-

"ओ बदनसीब अंधो! कमजोर अभागो!
अब भी तो खोलो नयन, नींद से जागो।
वह अघी, बाहुबल का जो अपलापी है,
जिसकी ज्वाला बुझ गई, वही पापी है।"

इन पंक्तियों में कवि ने निष्क्रियता और कमजोरी का विरोध किया है। वे चाहते हैं कि देशवासी अपने आत्मबल और साहस को पहचानें।

कवि स्वतंत्रता के प्रति लोगों को चेतावनी देते हुए कहते हैं कि देश की सीमाओं पर उत्पन्न संकट केवल बाहरी खतरा नहीं है, बल्कि यह स्वतंत्रता और राष्ट्रीय अस्तित्व पर भी संकट है। वे शत्रुओं का सामना साहस और शक्ति के साथ करने का आह्वान करते हैं-

"अंबर को भरो रणोच्चारों से,
क्रोधांध रोर, हाँकों से, हुंकारों से।
यह आग मात्र सीमा की नहीं लपट है,
मूढ़ों! स्वतंत्रता पर ही यह संकट है।"

दिनकर के अनुसार क्रांति के समय जाग्रत पौरुष और साहस की आवश्यकता होती है। वे लिखते हैं-

"हम मान गए, जब क्रांति काल होता है,
सारी लपटों का रंग लाल होता है।
जाग्रत पौरुष प्रज्वलित ज्वाल होता है,
शूरत्व नहीं कोमल, कराल होता है।"

इन पंक्तियों में कवि ने संघर्ष, साहस और वीरता की भावना को व्यक्त किया है।

वे आगे कहते हैं-

"कुत्सित कलंक का बोध नहीं छोड़ेंगे,
हम बिना लिए प्रतिशोध नहीं छोड़ेंगे।
अरि का विरोध-अवरोध नहीं छोड़ेंगे,
जब तक जीवित हैं, क्रोध नहीं छोड़ेंगे।"

इन पंक्तियों में कवि मातृभूमि के अपमान के विरुद्ध संघर्ष की भावना व्यक्त करते हैं। उनके लिए राष्ट्र की गरिमा और सम्मान सर्वोपरि है।

'समर शेष है' (1954) में राष्ट्रीय चेतना

जब दिनकर राज्यसभा के सदस्य बने, तब स्वतंत्रता प्राप्ति के सात वर्ष बाद भी उन्हें लगा कि स्वराज्य की वास्तविक कल्पना पूर्ण नहीं हुई है। इसी भावना को उन्होंने ***समर शेष है*** में व्यक्त किया।

वे लिखते हैं-

"पूछ रहा है जहाँ चकित हो जन-जन देख अकाज,
सात वर्ष हो गए राह में अटका कहाँ स्वराज।"

इन पंक्तियों में कवि स्वतंत्रता के बाद की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर चिंता व्यक्त करते हैं। वे केवल राजनीतिक स्वतंत्रता को पर्याप्त नहीं मानते, बल्कि सामाजिक न्याय और जनकल्याण को भी आवश्यक समझते हैं।

'हिमालय' में राष्ट्रीय चेतना

दिनकर ने ***हिमालय*** कविता में हिमालय को राष्ट्र की शक्ति और गौरव का प्रतीक माना है। वे हिमालय को संबोधित करते हुए भारत के वीरों को जागृत करने का आह्वान करते हैं।

वे लिखते हैं-

"तू मौन त्याग, कर सिंहनाद,
रे तपस्वी! आज तप का न काल।
नव-युग-शंख ध्वनि जगा रही,
तू जाग, जाग, मेरे विशाल!"

कवि हिमालय से आग्रह करते हैं कि वह अपनी शक्ति और ऊर्जा से राष्ट्र को प्रेरणा दे। वे कहते हैं कि देश की रक्षा और सम्मान के लिए वीरता आवश्यक है।

वे लिखते हैं-

"कितनी मणियाँ लुट गईं? मिटा
कितना मेरा वैभव अशेष!
तू ध्यान-मग्न ही रहा, इधर
वीरान हुआ प्यारा स्वदेश।"
— ***हिमालय***

इन पंक्तियों में कवि ने राष्ट्र की पीड़ा और उसके गौरव की रक्षा की भावना को व्यक्त किया है।

'तकदीर का बँटवारा' में राष्ट्रीय चेतना

इस रचना में दिनकर ने स्वार्थपूर्ण राजनीति और धर्म के नाम पर जनता के शोषण का चित्रण किया है। उन्होंने गुलाम भारत की जनता की दयनीय स्थिति को प्रस्तुत करते हुए युवाओं को जागृत होने का संदेश दिया है।

वे लिखते हैं-

"सूझता आगे न कोई पंथ है,
है घनी गफलत-घटा छाई हुई।
नौजवानों कौम के, तुम हो कहाँ?
नाश की देखो घड़ी आई हुई।"

इन पंक्तियों में कवि युवाओं को राष्ट्र निर्माण के लिए आगे आने का आह्वान करते हैं।

'फलेगी डालों में तलवार' में वीरता की चेतना

इस रचना में कवि विश्वास व्यक्त करते हैं कि भारत की धरती ऐसे वीरों को जन्म देगी, जो राष्ट्र की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर देंगे।

वे लिखते हैं-

"देश की मिट्टी का असि-वृक्ष,
गान-तरु होगा जब तैयार,
खिलेंगे अंगारों के फूल,
फलेगी डालों में तलवार।"

इन पंक्तियों में बलिदान, साहस और राष्ट्रप्रेम की भावना दिखाई देती है।

इस प्रकार ***परशुराम की प्रतीक्षा***, ***समर शेष है***, ***हिमालय*** और अन्य रचनाओं में दिनकर की राष्ट्रीय चेतना वीरता, आत्मसम्मान, संघर्ष और राष्ट्र निर्माण की भावना से जुड़ी हुई दिखाई

देती है। उनके काव्य में स्वतंत्रता की रक्षा, सामाजिक जागरण और नैतिक मूल्यों की स्थापना का संदेश मिलता है।

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना की समकालीन प्रासंगिकता

रामधारी सिंह दिनकर की राष्ट्रीय दृष्टि केवल भारत की आजादी तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह आज भी हमें नई दिशा प्रदान करती है। वर्तमान समय में वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद, भोगवाद, अकर्मण्यता, विलासिता और तकनीकी परिवर्तन के कारण सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं। ऐसे समय में राष्ट्रीय पहचान और सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है।

दिनकर का साहित्य हमें अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहने की प्रेरणा देता है। उनकी रचनाएँ सामाजिक न्याय, राष्ट्रीय चेतना, मानवीय गरिमा और सांस्कृतिक अस्मिता के महत्व को स्थापित करती हैं। आज के परिवेश में उनका साहित्य हमें स्वार्थ से ऊपर उठकर एक सशक्त, समतामूलक और आत्मनिर्भर राष्ट्र के निर्माण की प्रेरणा देता है।

दिनकर की रचनाओं में सामाजिक और आर्थिक असमानताओं पर तीखा प्रहार दिखाई देता है। वे समाज में समानता, सम्मान और मानवीय गरिमा को राष्ट्रीय एकता का आधार मानते हैं। उनकी विचारधारा आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि वर्तमान समाज में भी असमानता, बेरोजगारी, निराशा और सामाजिक असुरक्षा जैसी समस्याएँ मौजूद हैं।

दिनकर का साहित्य युवाओं को कठिन परिस्थितियों में धैर्य, साहस और संघर्ष की प्रेरणा देता है। उनकी राष्ट्रीय चेतना केवल देशप्रेम तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें मानवता, न्याय और नैतिक मूल्यों का समावेश है।

निष्कर्ष

रामधारी सिंह दिनकर की रचनाओं ने स्वतंत्रता आंदोलन के समय जनमानस में राष्ट्रीय भावना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी कृतियाँ राष्ट्र की भावनाओं, सांस्कृतिक गौरव, सामाजिक न्याय और मानवीय मूल्यों का सशक्त प्रतिनिधित्व करती हैं।

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना बहुआयामी है। उनकी प्रमुख कृतियाँ ***हुंकार, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी*** और ***परशुराम की प्रतीक्षा*** राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न स्वरूपों को अभिव्यक्त करती हैं। इनमें स्वाधीनता की आकांक्षा, आत्मगौरव, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, सामाजिक समरसता, जन-जागरण और मानवतावाद का सुंदर समन्वय दिखाई देता है।

दिनकर ने राष्ट्र को केवल एक राजनीतिक इकाई के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों से जुड़ा हुआ माना। उनका साहित्य यह संदेश देता है कि राष्ट्रीयता का वास्तविक अर्थ मानवता, उत्तरदायित्व और सामाजिक न्याय में निहित है।

उनका राष्ट्रवाद संकीर्ण नहीं, बल्कि व्यापक और मानवतावादी है। वे गांधीवादी विचारों से प्रभावित थे, किंतु विवेकानंद और परशुराम जैसे व्यक्तित्वों को भी अपना आदर्श मानते थे। पौराणिक और ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से उन्होंने आधुनिक समाज की समस्याओं को प्रस्तुत किया।

यही कारण है कि दिनकर की रचनाएँ आज भी भारतीय समाज को प्रेरित करती हैं। उनका साहित्य भारतीय राष्ट्र की आत्मा, उसकी संस्कृति और उसके उज्ज्वल भविष्य के प्रति अटूट विश्वास का प्रतीक है।

संदर्भ सूची

1. दिनकर, रामधारी सिंह (2018), ***रश्मिरथी***, नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
2. दिनकर, रामधारी सिंह (2019), ***कुरुक्षेत्र***, नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
3. दिनकर, रामधारी सिंह (2017), ***हुंकार***, पटना: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
4. दिनकर, रामधारी सिंह (2018), ***परशुराम की प्रतीक्षा***, नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।

5. दिनकर, रामधारी सिंह (2016), ***संस्कृति के चार अध्याय***, नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
6. शर्मा, रामविलास (2015), ***भारतीय साहित्य और राष्ट्रीय चेतना***, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
7. वाजपेयी, नंददुलारे (2012), ***हिंदी साहित्य-बीसवीं शताब्दी***, इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
8. सिंह, नामवर (2018), ***इतिहास और आलोचना***, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
9. द्विवेदी, हजारीप्रसाद (2014), ***हिंदी साहित्य की भूमिका***, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
10. मिश्र, शिवकुमार (2016), ***दिनकर और उनका साहित्य***, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
11. शुक्ल, रामचंद्र (1940), ***हिंदी साहित्य का इतिहास***, काशी: नागरी प्रचारिणी सभा।
12. कविता कोश, हिन्दवी, गद्य कोश।